जोबनेर कृषि

मार्च, 2025 वर्ष : 10 अंक : 3 प्रति अंक मूल्य 25 रुपये वार्षिक शुल्क : 250 रुपये

प्रसार शिक्षा निदेशालय

श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय
जोबनेर, जिला–जयपुर (राज.) 303 329

बीज सुखाने का महत्व और इसके प्रभाव

डॉ. दीपक गुप्ता
सहायक प्रोफेसर, कृषि महाविद्यालय, फतेहपुर
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

बीज सुखाने की प्रक्रिया बीज उत्पादन, भंडारण और संरक्षण में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। उचित सुखाने से बीजों की नमी को नियंत्रित किया जाता है, जिससे फफूंद और अन्य रोगजनकों की वृद्धि को रोका जा सकता है। यह प्रक्रिया एंजाइम क्षरण को कम करने और बीज की दीर्घायु को बढ़ाने में सहायक होती है। सही तरीके से सुखाए गए बीज लंबे समय तक अपनी अंकुरण क्षमता बनाए रखते हैं, जिससे कृषि उत्पादन और जैव विविधता संरक्षण को बढ़ावा मिलता है। बीजों को सुखाने की विभिन्न विधियाँ उपलब्ध हैं, जिनका चुनाव बीज के प्रकार, भंडारण आवश्यकताओं और उत्पादन के पैमाने पर निर्भर करता है।

बीज सुखाने की विधियाँ

1. प्राकृतिक सुखाने : प्राकृतिक सुखाने की विधि सबसे सरल और पारंपरिक विधि है, जिसमें बीजों को खुले वातावरण में फैलाकर सुखाया जाता है ताकि वे प्राकृतिक रूप से अपनी नमी खो दें। यह विधि विशेष रूप से छोटे किसानों और पारंपरिक बीज भंडारण प्रणालियों में प्रचलित है। इस प्रक्रिया में बीजों को धूप में या छायादार स्थानों में रखा जाता है, जिससे उन्हें अत्यधिक गर्मी से बचाया जा सके और उनकी गुणवत्ता बनी रहे। छायादार सुखाने से बीजों में उपस्थित नमी धीरे–धीरे निकलती है, जिससे उनके अंकुरण क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता। हालांकि, यह विधि मौसम की परिस्थितियों पर निर्भर करती है और इसमें अधिक समय लग सकता है। अधिक आर्द्रता या अचानक बारिश होने पर बीजों की गुणवत्ता प्रभावित हो सकती है, जिससे वे अंकुरण क्षमता खो सकते हैं। इसके अलावा, पक्षियों, कीटों और अन्य जीवों द्वारा बीजों की हानि होने की संभावना भी बनी रहती है।

2. वायु प्रवाह सुखाने : वायु प्रवाह सुखाने में बीजों को सुखाने के लिए पंखों या गर्म हवा का उपयोग किया जाता है। इस विधि में बीजों को विशेष चेंबर या भंडारण इकाइयों में रखा जाता है, जहाँ नियंत्रित वायु प्रवाह के माध्यम से नमी को समान रूप से हटाया जाता है। यह विधि बड़े पैमाने पर बीज उत्पादन और प्रसंस्करण केंद्रों में व्यापक रूप से अपनाई जाती है क्योंकि यह प्राकृतिक सुखाने की तुलना में अधिक कुशल होती है और कम समय में बीजों को सुरक्षित रूप से सुखाने में सक्षम होती है। वायु प्रवाह सुखाने में हवा के तापमान, नमी और गति को नियंत्रित किया जाता है, जिससे बीजों को बिना अधिक क्षति के सुखाया जा सकता है। हालांकि, यह विधि ऊर्जा–गहन होती है और अत्यधिक गर्मी का अनुचित प्रयोग बीजों की गुणवत्ता को प्रभावित कर सकता है। यदि तापमान 45 डिग्री सेन्टीग्रेड से अधिक हो जाए, तो बीजों में मौजूद प्रोटीन और एंजाइम नष्ट हो सकते हैं, जिससे अंकुरण क्षमता में गिरावट आ सकती है।

3. शोषक सुखाने : शोषक सुखाने की विधि उन बीजों के लिए उपयुक्त होती है, जिन्हें अत्यधिक संवेदनशील माना जाता है और जिन्हें लंबे समय तक संग्रहीत करने की आवश्यकता होती है। इस विधि में बीजों को सिलिका जेल, जिओलाइट, सक्रिय क्ले या अन्य नमी अवशोषित करने वाले पदार्थों के साथ बंद कंटेनरों में रखा जाता है। ये शोषक सामग्री बीजों से धीरे–धीरे नमी अवशोषित कर लेती हैं, जिससे बीजों की भंडारण क्षमता बढ़ती है और वे लंबे समय तक अपनी अंकुरण क्षमता बनाए रखते हैं। इस विधि का उपयोग आमतौर पर दुर्लभ, अनुसंधान–आधारित या आनुवंशिक रूप से महत्वपूर्ण बीजों के संरक्षण के लिए किया जाता है। हालांकि, शोषक सुखाने की प्रक्रिया अपेक्षात महंगी होती है और इसे बड़े पैमाने पर लागू करना कठिन होता है। इसके अलावा, शोषक सामग्री को समय–समय पर पुनः सक्रिय या प्रतिस्थापित करने की आवश्यकता होती है, जिससे यह विधि थोड़ी अधिक जटिल हो जाती है।

4. निर्वात सुखाने : निर्वात सुखाने की विधि में बीजों को कम दबाव वाले चेंबर में रखा जाता है, जहाँ वायुमंडलीय दाब को कम करके नमी को जल्दी और प्रभावी रूप से हटाया जाता है। यह विधि विशेष रूप से उन बीजों के लिए उपयोगी होती है, जो अत्यधिक नाजुक होते हैं और तापमान संवेदनशील होते हैं, जैसे सब्जियों, औषधीय पौधों और संकर बीजों के बीज। निर्वात सुखाने से बीजों में उपस्थित पानी कम वाष्पीकरण बिंदु पर ही समाप्त हो जाता है, जिससे बीजों की संरचना और जैविक गतिविधियाँ सुरक्षित रहती हैं। यह विधि तेज होती है और इसमें न्यूनतम नुकसान होता है, लेकिन इसके लिए अत्याधुनिक उपकरणों और विशेषज्ञता की आवश्यकता होती है। निर्वात सुखाने की उच्च लागत और जटिलता के कारण यह विधि केवल विशेष अनुसंधान केंद्रों, बीज बैंकों और कृषि वैज्ञानिक संस्थानों में ही अधिकतर उपयोग की जाती है।

5. नियंत्रित वातावरण सुखाने : नियंत्रित वातावरण सुखाने एक उन्नत तकनीक है, जिसमें तापमान, आर्द्रता और वायु प्रवाह को विशेष रूप से नियंत्रित किया जाता है ताकि बीजों को समान रूप से और सुरक्षित रूप से सुखाया जा सके। इस विधि में एक परिष्कृत सुखाने कक्ष का उपयोग किया जाता है, जहाँ पूर्व निर्धारित पर्यावरणीय परिस्थितियों में बीजों को सुखाया जाता है। यह विधि विशेष रूप से जर्मप्लाज्म संरक्षण, अनुसंधान संस्थानों और बीज बैंकों में उपयोग की जाती है, जहाँ बीजों को दशकों तक संरक्षित किया जाना आवश्यक होता है। नियंत्रित वातावरण सुखाने से बीजों में जैविक क्षति की संभावना न्यूनतम रहती है और उनकी अंकुरण क्षमता अधिक समय तक बनी रहती है। हालांकि, इस विधि की स्थापना और रखरखाव काफी महंगा होता है, जिससे इसे केवल उच्च स्तरीय अनुसंधान केंद्रों और औद्योगिक स्तर पर अपनाया जाता है।

बीज सुखाने का बीज दीर्घायु पर प्रभाव

बीजों की दीर्घायु मुख्य रूप से सुखाने की प्रक्रिया पर निर्भर करती है। यदि बीजों को उचित रूप से सुखाया न जाए तो उनकी अंकुरण क्षमता, शक्ति और भंडारण क्षमता प्रभावित हो सकती है। निम्नलिखित कारक बीज दीर्घायु को प्रभावित करते हैं :

1. नमी सामग्री और बीज दीर्घायु

बीजों को भंडारण के लिए आमतौर पर 5–8 प्रतिशत नमी स्तर तक सुखाया जाता है, जिससे उनकी दीर्घकालिक व्यवहार्यता बनी रहती है। उच्च नमी सामग्री (12 प्रतिशत से अधिक) वाले बीजों में श्वसन क्रिया तेज हो जाती है, जिससे उनका शीघ्र क्षय हो सकता है। अत्यधिक शुष्क बीज (3 प्रतिशत से कम नमी) भी संरचनात्मक क्षति का शिकार हो सकते हैं, जिससे अंकुरण दर प्रभावित हो सकती है।

2. तापमान संवेदनशीलता

अत्यधिक तापमान (40–45 डिग्री सेन्टीग्रेड से अधिक) पर सुखाने से बीजों में उपस्थित एंजाइम क्षतिग्रस्त हो सकते हैं, जिससे उनका अंकुरण प्रभावित होता है। तिलहन फसलों जैसे सोयाबीन और

सूरजमुखी के बीज उच्च तापमान पर अपना तेलीय घटक खो सकते हैं। धीमी गति से नियंत्रित तापमान (<35 डिग्री सेन्टीग्रेड) पर सुखाने से बीजों की जैविक संरचना सुरक्षित रहती है।

3. सूक्ष्मजीवों की वृद्धि की रोकथाम

बीजों की उच्च नमी सामग्री (13 प्रतिशत से अधिक) फफूंद और जीवाणु वृद्धि को बढ़ावा देती है, जिससे बीज की गुणवत्ता और अंकुरण दर कम हो सकती है। उचित सुखाने से सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को रोका जा सकता है और बीजों की भंडारण क्षमता बढ़ाई जा सकती है।

4. जैविक परिवर्तन और बीज दीर्घायु

यदि बीजों को बहुत तेजी से सुखाया जाए तो उनके ऊतक क्षतिग्रस्त हो सकते हैं, जिससे अंकुरण दर प्रभावित हो सकती है। धीरे–धीरे नमी हटाने से बीजों को पर्यावरणीय परिवर्तनों के अनुकूल होने का समय मिलता है, जिससे वे लंबे समय तक स्वस्थ रहते हैं।

5. भंडारण अवधि और अंकुरण दर

बीजों की भंडारण अवधि उनकी नमी सामग्री और सुखाने की विधि पर निर्भर करती है। यदि बीजों को उचित रूप से सुखाया और ठंडे वातावरण में संग्रहित किया जाए, तो उनकी अंकुरण क्षमता वर्षों तक बनी रह सकती है। सही तरीके से सुखाए गए बीजों की अंकुरण दर अधिक होती है, जिससे उनकी खेती में सफलता दर भी बढ़ती है।

किसानों के लिए सुझाव :

- ✧ बीजों को उचित नमी स्तर (5–8 प्रतिशत) तक सुखाएं ताकि उनकी दीर्घायु बनी रहे।
- ✧ छायादार सुखाने की विधि अपनाएं, जिससे बीजों की प्रातिक संरचना बनी रहे।
- ✧ उच्च तापमान (40 डिग्री सेन्टीग्रेड से अधिक) पर सुखाने से बचें, ताकि बीजों के एंजाइम और प्रोटीन सुरक्षित रहें।
- ✧ भंडारण के दौरान बीजों को अत्यधिक आर्द्रता और नमी से बचाएं, जिससे सूक्ष्मजीवों का विकास न हो।
- ✧ यदि संभव हो, तो नियंत्रित वातावरण में बीजों को संग्रहित करें, जिससे उनकी अंकुरण क्षमता लंबी अवधि तक बनी रहे।

टनल तकनीक से कद्दूवर्गीय सब्जियों का उत्पादन

गणेश राम1, डॉ. बी.आर. चौधरी2, नरेश कुमार3 एवं मुकेश जाखड़4
1विद्यावाचस्पति, सब्जी विज्ञान विभाग,
2प्रधान वैज्ञानिक,
3एसआरएफ, केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर
4विद्यावाचस्पति, कीट विज्ञान विभाग, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

गर्म शुष्क क्षेत्रों में कद्दूवर्गीय सब्जियाँ जैसे ककड़ी, टिण्डा, चप्पन कद्दू, खरबूजा, तरबूज, लौकी, तोरई आदि की खेती की जाती है। इन सब्जियों से लगभग सभी प्रकार के पोषक तत्व जैसे प्रोटीन, विटामिनस तथा खनिज लवण प्राप्त होते है। ग्रीष्मकालीन में इन सब्जियों की बुवाई फरवरी–मार्च में की जाती है। क्योंकि अंकुरण के लिए 25–30° सेल्सियस तापमान आवश्यक है जो कि फरवरी माह के अन्त तक आता है। जब इन सब्जियों में फूल आना शुरू होते हें उस समय तापमान काफी बढ़ जाता है ताकि तेज आँधी भी चलने लगती है। जिससे वाष्पोत्सर्जन की दर बढ़ जाती है। परिणामस्वरूप पौधे मुरझाने लगते हें। उच्च तापमान के कारण इन सब्जियों में नर फूल अधिक बनते हैं तथा परागण में सहायक कीट भी कम हो जाते हैं। तापमान 40° सेल्सियस से अधिक होने पर फसल की बढ़वार, उपज तथा गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इन सब प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण कद्दू वर्गीय सब्जियों की उपज काफी कम तथा निम्न गुणवत्ता की प्राप्त होती है। जिससे उत्पादकों को भरपूर लाभ नहीं मिलता है। परन्तु लो–टनल तकनीक को अपनाकर गर्म शुष्क क्षेत्रों में कद्दू वर्गीय सब्जियों की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है।

उन्नत किस्में : राजस्थान में विभिन्न कद्दूवर्गीय सब्जियों की अनुमोदित किस्में निम्नलिखित हैं :–

फसल	उन्नत किस्में
चप्पन कद्दू	आस्ट्रेलियन ग्रीन, पूसा अलंकार
लौकी	थार समृद्धि, पूसा समर प्रोलिफिकिलोंग, पूसा समर प्रोलिफिकराउंड, पूसा नवीन, पूसा संदेश
धारीदार तौरई	थार करणी, पूसा नसदार
तरबूज	थार तरपति, थार माणक, शुगर बेबर, दुर्गापुरा लाल
खरबूजा	थार महिमा, हरा मधु, पूसा मधुरम्, दुर्गापुरा मधु, पंजाब सुनहरी
फूट ककड़ी	ए.एच.एस.–1., ए.एच.एस.–82
ककड़ी	थार शीतल, पंजाब लॉन्गमेलन–1, अर्का शीतल
काचरी	ए.एच.के.–119, ए.एच.के.–200

लो टनल का सिद्धान्त :

I. वायुमंडल में CO_2 की सांद्रता 0.03% (30°ppm) होती है। पौधे इस CO_2 का उपयोग प्रकाश संश्लेषण के लिए करते हैं।

II. पॉली टनल में, रात के समय कोई प्रकाश संश्लेषण नहीं होता लेकिन श्वसन के माध्यम से CO_2 उत्सर्जित होती है।

III. यह CO_2 पोधों के चारों ओर एकत्रित हो जाती है। जिससे पॉली टनल के अन्दर CO_2 की सांद्रता बाहरी वातावरण की तुलना में अधिक होती है। यह CO_2 पॉली टनल में उग रहे पौधों द्वारा तीव्र प्रकाश संश्लेषण केलिए पुनः उपयोग की जाती है।

लो टनल तकनीक

कद्दूवर्गीय सब्जियाँ गर्म जलवायु की फसलें हैं जिनमें ठंड तथा पाला सहन करने की क्षमता नहीं होती है। बीज कें अंकुरण व पौधों की बढ़वार के लिए 25–30° सेल्सियस तापमान उपयुक्त रहता है। मौसम तथा क्षेत्रीय परिस्थितियों के आधार पर कद्दूवर्गीय सब्जियों की अगेती खेती के लिए निम्न सुरंग (लो टनल) तकनीक तथा दियारा विधि के रूपान्तरण से एक नई तकनीक अपनाई गई जो गर्म शुष्क क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। लो टनल तकनीक उत्तर भारत के मैदानी भागों में कद्दूवर्गीय सब्जियों की बेमौसम खेती केलिए बहुत उपयोगी है। जहाँ सर्दी के मौसम में रात का तापमान लगभग 40 से 60 दिनों तक 8° सेल्सियस से नीचे रहता है। इस तकनीक में दिसम्बर माह के अन्तिम सप्ताह से लेकर जनवरी माह के प्रथम सप्ताह में बीजों की बुवाई ड्रिपयुक्त नही (ट्रेच) में करके इसको प्लास्टिक की चादर से ढ़क देते हैं जिससे कद्दूवर्गीय सब्जियों को उनके सामान्य समय से पहले उगाना संभव है। इस तकनीक से फसल निम्न तापमान व पाले से सुरक्षित

रहती है तथा सामान्य दशाओं में बोई गई फसल से 30–40 दिन पहले तैयार हो जाती है। जिससे किसान को बाजार भाव भी अधिक मिलता है।

दिसम्बर माह में खेत में फसल के अनुसार 2–2.5 मीटर की दूरी पर 45 सेंमी. चौड़ी तथा 45–60 सेमी. गहरी नालियाँ पूर्व से पश्चिम दिशा में बनाते हैं। इन नालियों में सड़ी–गली गोबर की खाद (150 क्विंटल/हैक्टेयर) तथा नत्रजन, फॉस्फोरस व पोटाश क्रमशः 20, 60 व 60 किग्रा/हैक्टेयर डालनी चाहिए। बुआई के 20 एवं 40 दिन बाद नत्रजन की 20–22 कि.ग्रा. मात्रा को टॉप ड्रेसिंग के रूप में जड़ के पास देना चाहिए। पानी में घुलनशील 19:19:19 एन.पी.के. 10–15 कि.ग्रा./हैक्टेयर को फसल की वानस्पतिक बढ़वार के समय ड्रिप द्वारा सिंचाई के साथ देना चाहिए। नत्रजन की अधिक मात्रा देने से बचना चाहिए। अन्यथा पौधों की वानस्पतिक बढ़वार अधिक होगी तथा नर फूल अधिक संख्या में आएंगे परिणामस्वरूप फलत कम होगी। सिंचाई के लिए 4 लीटर/घण्टा पानी डिस्चार्ज वाले ड्रिपर की 12–16 मि.मी. आकार की ड्रिप पाईप (लेटरल) जिन पर 60–80 सेमी. की दूरी पर इन लाइन ड्रिपर लगे हो, को नालियों में बिछा देना चाहिए।

बुवाई करने से पूर्व बीजों का अंकुरण कराना आवश्यक है क्योंकि दिसम्बर–जनवरी माह में निम्न तापमान के कारण इनका अंकुरण देर से होता है। अतः अंकुरण के लिए बीजों को पानी में भिगोना चाहिए। पानी में भिगोने की अवधि बीज के छिलके की मोटाई पर निर्भर करती है जो कि 3–4 घण्टा (खरबूजा, खीरा, ककड़ी), 6–8 घण्टा (लौकी, तोरई) तथा 10–12 घण्टा (टिण्डा, तरबूज) रखनी चाहिए। भिगोने के बाद बीज को केप्टान (2 ग्राम/कि.ग्र. बीज) से उपचारित करना चाहिए। बीज उपचार के बाद उन्हें बोरे के टुकड़े में लपेटकर किसी गर्म स्थान जैसे बिना सड़ी हुई गोबर की खाद या भूसा में 1–2 दिन तक दबाने से बीजों का अंकुरण शीघ्र हो जाता है। इन अंकुरित बीजों की बुवाई तैयार नालियों में दिसम्बर के अन्तिम सप्ताह से जनवरी के प्रथम सप्ताह तक कर देनी चाहिए। एक ड्रिपर के पास कम से कम 2 बीजों की बुवाई करते हैं। नाली (ट्रेंच) के ऊपर अर्धचन्द्राकार का जंगरोधी लौहे के तारों (2 मि.मी. मोटाई) को 3–4 मीटर की दूरी पर स्थापित करते हैं। इन तारों पर 25–50 माइक्रोन मोटी तथा 2 मीटर चौड़ी पारदर्शी प्लास्टिक की चादर बिछा कर इसकी लम्बाई वाले से दोनों सिरों को मिट्टी से दबा दिया जाता है। इस प्रकार बोई गई फसल पर प्लास्टिक की एक लघु सुरंग बन जाती है। प्लास्टिक से ढकने से नाली के अन्दर का तापमान सामान्य से 8–10° सेल्सियस अधिक बना रहता है। जिससे बीजों का अंकुरण जल्दी हो जाता है तथा पौधों का विकास भी सुचारू रूप से होता रहता है। समय–समय पर प्लास्टिक को हटाकर फसल का निरीक्षण भी करते रहना चाहिए। तथा कीट व बीमारी का प्रकोप होने पर उनका समुचित नियन्त्रण भी करना चाहिए। इस विधि से बुवाई करने पर फूल बनते समय वातावरण का तापमान बहुत अनुकूल रहता है जिससे मादा फूल अधिक आते हैं तथा उस समय परागण करने वाले कीट भी अधिक होने पर फलत अच्छी होती है।

फरवरी के दूसरे या तीसरे सप्ताह में जब मौसम का तापमान बढ़ जाता है तथा कद्दूवर्गीय सब्जियों की बढ़वार के अनुकूल हो जाता है तथा प्लास्टिक कीट टनल को हटाकर खरपतवारों को निकाल देना चाहिए। प्लास्टिक की टनल को कभी भी एकदम नहीं हटाना चाहिए। ऐसा करने से पौधों को धक्का लगता है तथा वे मुरझा जाते हैं। जिससे उनकी वानस्पतिक वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अतः सबसे पहले टनल के दोनों छोरों से प्लास्टिक को हटा देना चाहिए तथा इसके 2–3 दिन बाद प्लास्टिक को हटा देना चाहिए। यह प्रक्रिया 2–3 दिन तक करने से पौधों का कठोरी करण हो जाता है तथा पौधे मौसम के अनुकूल ढल जाते हैं। इस प्रकार इस तकनीक से बोई गई फसल सामान्य दशा में बोई गई फसल से 40–50 दिन अगेती प्राप्त होती है। जिससे गुणवत्तायुक्त उपज मिलती है तथा अगेती होने के कारण बाजार में इन सब्जियों का मूल्य भी अधिक प्राप्त होता है।

फसल का उच्चतापमान से बचाव

पौधों की वानस्पतिक वृद्धि के दौरान कतारों के बीच सरकंडा बिछा देना चाहिए जिससे पौधों का गर्म मिट्टी से बचाव होने के कारण बढ़वार अच्छी होती है तथा फल भी सीधे जमीन के सम्पर्क में नहीं आने से कई बीमारियों से बच जाते हैं। वानस्पतिक वृद्धि के समय पौधों की दिशा देनी चाहिए ताकि उनके तन्तु सरकंडा को पकड़ लें। सरकंडा बिछाने से पोधे जमीन पर उचित तरीके से फैलते हैं। जिससे लगभग सभी मादा फूलों में परागण हो जाता है। अप्रैल–मई माह में तापमान 40° सेल्सियस से अधिक होने के कारण परागण में सहायक कीट कम हो जाते हैं। जिससे फल कम बनते हें। अतः उचित परागण के लिए प्रति एकड़ 1–2 मधुमक्खी के छते रखने चाहिए। इस प्रकार लो टनल तकनीक से कद्दूवर्गीय सब्जियों की खेती करके किसान अधिक उपज तथा लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

लागत कम करने के उपाय

प्लास्टिक को हटाने के बाद इसको ठीक से समेट कर रखना चाहिए। ताकि अगले वर्ष पुनः उपयोग में लेना चाहिए। फसल समाप्त होने पर सरकंडा को भी एकत्रित करके रखें व अगले वर्ष पुनः उपयोग में लेना चाहिए। अर्धचन्द्राकार जंगरोधी लौहे के तारों की बजाय फालसा की प्रूनिंग से प्राप्त टहनियों को लगाएं क्योंकि इनमें लचक होती है तथा फालसा की प्रूनिंग का समय भी दिसम्बर होता है। फालसा को खेत के चारों तरफ लगाना चाहिए। जिससे फल व टहनियां भी प्राप्त होगी तथा यह ग्रीष्मकाल में तेज हवा को रोकने में भी सहायक होगा। एकीकृत कीट प्रबन्धन अपनाएं तथा कीटनाशकों का प्रयोग आवश्यकता।

उपज दर की लागत

खेती की लागत (रू./हैक्टेयर)	उपज (रू./हैक्टेयर)	मूल्य (रू./कि.ग्रा.)	सकल आय (रू.)	शुद्ध आय (रू.)	लाभ–लागत अनुपात
90000	180	15	270000	180000	2.00
80000	150	20	300000	220000	2.75
80000	240	10	240000	160000	2.00

बीजीय मसालों वाली फसलों में बीमारियों एवं कीट का समेकित प्रबन्धन

अशोककुमार[1] एवं डॉ. नरपतसिह[2]
[1]प्रसार शिक्षा, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर
[2]सह आचार्य, एपेक्स यूनिवर्सिटी, जयपुर (राजस्थान)

वे पौधें जिनके बीज, भोजन विशेष में स्वाद एवं सुगन्ध बढ़ाने के लिये उपयोग में लाये जाते हैं उन्हें बीजीय मसालें वाली फसलें कहते है। जैसे – धनियाँ, जीरा, मेथी एवं सौंफ ये आवश्यक तेलों की उपस्थिति के कारण

स्वाद एवं सुगन्ध प्रदान करते है।

देश में राजस्थान एवं गुजरात बीजीय मसालों वाली फसलों के मुख्य उत्पादक राज्य है। राजस्थान राज्य बीजीय मसालों वाली फसलों के उत्पादन मे अग्रणी राज्य है। जिसका जीरा उत्पादन में 40–50 प्रतिशत, सौंफ उत्पादन में 12 प्रतिशत, मेथी उत्पादन में 99 प्रतिशत एवं धनियॉ उत्पादन में 40 प्रतिशत योगदान है।

धनिया

प्रमुख बीमारियों एवं रोकथाम :-

छाछ्या (पाउडरी मिल्डयू) :-पौधों की पत्तियां एवं टहनियों पर सफेद चूर्ण दिखाई देता है। रोग का प्रकोप अधिक होने पर या तो बीज नही बनते या बहुत ही छोटे बीज बनते है। जिससे इनकी गुणवत्ता कम हो जाती है।

नियन्त्रण :-इसके नियंत्रण के लिए गंधक का चूर्ण 25 किग्रा प्रति हैक्टेयर के हिसाब से भुरकाव करें या घुलनशील गंधक 0.2 प्रतिशत घोल, केराथीन 0.1 प्रतिशत एवं केलेक्सिन 0.05 प्रतिशत में से कोई एक दवा का 500–700 लीटर घोल प्रति हैक्टेयर के हिसाब से छिड़काव करें। आवश्यकता होने पर 15–20 दिन बाद छिड़काव दुहरावें।

तना सूजन (स्टेम गॉल) :-इस रोग के कारण तने एवं पत्तियों पर विभिन्न आकार के फफोले पड़ जाते है। पौधों की बढ़वार रूक कर पीले पड़ जाते है। पुष्पक्रम पर आक्रमण होने पर बीजों का आकार बदल कर बीजों की शक्ल ही बदल जाती है। वातावरण में नमी अधिक होने पर बीमारी का प्रकोप बढ़ जाता है।

नियन्त्रण :- बीजों को बुवाई से पूर्व थाइराम 1.5 ग्राम व बाविस्टीन 1.5 ग्राम (1:1) प्रति ग्राम बीज की दर से उपचारित कर बुवाई करें। खड़ी फसल में बीमारी के लक्षण दिखने पर बाविस्टीन 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

उखटा (विल्ट) :- इस रोग में पौधे हरे के हरे मुरझा जाते है। यह पौधे की छोटी अवस्था में ज्यादा होता है। परन्तु रोग का प्रकोप किसी भी अवस्था में हो सकता है। इसके नियंत्रण के लिए गर्मी में गहरी जुताई करें, उपयुक्त फसल चक्र अपनाये, बीजोपचार बाविस्टीन 2.0 ग्राम या ट्राइकोडर्मा 4.0 ग्राम प्रति किग्रा. बीज के हिसाब से करें।

झुलसा (ब्लाईट) :-धनिये पर इस रोग का प्रकोप होने पर पत्तियों पर गहरे भूरे रंग के धब्बे बन जाते है। और पत्तियॉं झुलसी हुई दिखाई देती है। नियंत्रण हेतु बाविस्टीन 0.1 प्रतिशत या इन्डोफिल एम–45 या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड या ब्लयूकॉपर 0.2 प्रतिशत के घोल का छिड़काव 400–500 लीटर प्रति हैक्टेयर के हिसाब से करें।

कीट नियन्त्रण एवं रोकथाम :-

मोयला (एफिड) :-धनिये में फूलन आते वक्त या उसके बाद मोयला का प्रकोप होता है। ये पोधों के कोमल भागों का रस चूसते है जिससे उपज में भारी कमी आ जाती है। बरूथी भी रस चूस कर पौधों को काफी हानि पहुँचाते है।

कीटों के नियन्त्रण हेतु फसल पर डाइमिथोएट 30 ई.सी. का क्रमशः 0.03 और 0.05 प्रतिशत का 500–600लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टेयर के हिसाब से छिड़के, छिड़काव शाम के समय करें। जिससे मधुमखियों को नुकसान न हो।

कट वर्म एवं वायर वर्म :-इस कीट की सूण्डी भूरे रंग की होती है। शाम के समय यह सूण्डी पौधों को जमीन की सतह के पास से काटकर गिरा देती है। इसका प्रकोप फसल की शुरू की अवस्था में होता है। जिससे फसल को अधिक नुकसान पहुंचाता है। इस कीट के नियन्त्रण हेतु मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत चूर्ण 20–25 किलो प्रति हैक्टेयर की दर से भूमि में जुताई के समय मिलावे।

बरूथी (माईट्स) :- इसका प्रयोग दाना बनते समय होता है तथा पूरा पौधा हल्का पीला रंग का हो जाता है। इसका प्रकोप मुख्यतः नई पत्तियों व पुष्पक्रम पर होता है। पौधा छोटा रह जाता है। यह छोटा कीट पत्तियों की निचली सतह पर दिखाई देता है। मोयला के नियन्त्रण के लिए काम में आने वाले कीटनाशकों का प्रयोग करें।

छाछ्या रोग एवं एफिड (मोयला) का कार्बनिक प्रबन्धन

धनिये में छाछ्या रोग एवं एफिड (मोयला) के कार्बनिक प्रबन्धन के लिए भूमि में 5 टन प्रति हैक्टेयर की दर से वर्मी कम्पोस्ट मिलाकर, बीजों को 5 प्रतिशत नीम बीज अर्क से बीजोपचार एवं 5 प्रतिशत नीम बीज अर्क का छिड़काव 10 दिन के अंतराल (दो/तीन बार) करना प्रभावी एवं फायदेमंद पाया गया है।

जीरा

प्रमुख कीट, रोग एवं रोकथाम :-

मोयला (एफिड) :-जीरे में रस चुसक कीटों में मोयला प्रमुख है। यह पीले हरे रंग का सूक्ष्म कोमल शरीर वाला अंगकार कीट है। इसे चेपा भी कहते है। इस कीट का आक्रमण फूल आते समय होता है। और फसल में दाना पकने तक रहता हैं पौधे के ऊपरी भाग के सभी अंगों पर स्थायी रूप से झुण्डों में चिपककर व रस चूसकर पौधों को नुकसान पहुंचाते हैं प्रभावित पौधे कमजोर हो जाते हैं तथा उन पर इस कीट द्वारा मीठा पदार्थ छोड़ने से काली फफूंद पनप जाती है जिससे पत्तियां सिकुड़कर मुड़ जाती है। इस कीट का प्रकोप फरवरी–मार्च महीने में अधिक होता है। इससे 50 प्रतिशत तक उपज में कमी हो सकती है। मौसम में नमी हल्की बूंदाबादी तथा आकाश में लम्बे समय तक बादल छाये रहने पर कीट के शिशु व प्रोढों का प्रकोप उग्र रूप धारण कर लेता हैं जो हानिकाकर होता है।

नियन्त्रण :

1. बुवाई पूर्व बीजों को इमिडाक्लोप्रिड 70 डब्ल्यू. एस.से साढे सात ग्राम प्रति किलो बीज से उपचारित करें।
2. खेत की सफाई का ध्यान रखे एवं खेत में खरपतवार नही पनपने देवें।
3. कीट के प्रकोप की निगरानी रखते हुए पीले चिपचिपे पाश (ट्रेप) काम में लेवें। दस पीले पिचपिचे पाश प्रति हैक्टेयर के लिए पर्याप्त हे।
4. मोयले के रासायनिक नियन्त्रण के लिए डाइमिथोएट 30 ई.सी. 500 मि.ली. प्रति हैक्टेयर के हिसाब से छिड़काव करना चाहिए एवं आवश्यकतानुसार छिड़काव 10–15 दिन बाद दोहराना चाहिए।

उखटा (विल्ट) :-यह रोग फ्यूजेरियम आक्सीरपोरम फार्म स्पिशिज क्यूमिनाई नामक कवक से होता है। इस रोग का प्रकोप पौधों की किसी भी अवस्था मे हो सकता हैं परन्तु युवावस्था मे प्रकोप ज्यादा होता हैं यह रोग बीज व भूमि जनित होता है। खेत में इस रोग से ग्रसित पौधों हरे के हरे ही मुरझा कर सूख जाते हैं रोगी पौधे कद में छोटे तथा पत्तियां दूर से ही पीली नजर आती है।

नियन्त्रण :-

1. रोग रहित पौधें से प्राप्त बीज ही बोना चाहिये।
2. रोग ग्रसित खेत में जीरे की बुवाई नहीं करें।
3. गर्मी में खेत की गहरी जुताई करे।।
4. कम से कम तीन वर्ष का फसल चक्र (ग्वार–जीरा, ग्वार– गेहूं, ग्वार–सरसों) अपनायें।
5. बुवाई से पूर्व सरसों या नीम की खली 2.5 टन प्रति हैक्टेयर की दर से भूमि में मिलावें।
6. बीजों को 2 ग्राम बाविस्टीन (कार्बेनडाजिम) कवकनाशी या ट्राइकोडर्मा 4 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित कर बुवाई करें।
7. रोग रोधक किस्म बुवाई के काम में लेवें।

उखटा रोग का जैविक नियन्त्रण

जीरे में उखटा रोग के जैविक नियन्त्रण के लिए भूमि में 3.2 टन प्रति हेक्टर की दर से वर्मीकम्पोस्ट एवं 10 किग्रा प्रति हेक्टर की दर से ट्राइकोडर्मा विरिडी मिलाना प्रभावी एवं फायदेमंद पाया गया है।

झुलसा (ब्लाईट) :-यह रोग आल्टरनेरिया बर्नसाई नामक कवक से होता है। रोग के लक्षण पोधे की पत्तियों पर भूरे रंग के धब्बों के रूप में दिखाई देते है। धीरे– धीरे ये काले रंग में बदल जाते हैं यह रोग पत्तियों से वृंत तने एवं बीज पर इसका प्रकोप बढ़ता है। पौधों के शिरे झुके हुए नजर आते है।

नियन्त्रण :-

1. स्वस्थ बीज ही बोने के काम में लेवें।
2. उचित सिंचाई प्रबन्ध करें, अधिक सिंचाई नही करे तथा ज्यादा पानी वाली फसले जीरे की फसल के पास नही लगावें।
3. जीरे के खेतों में पौधों की संख्या आवश्यकता से अधिक नही रखें।
4. गर्मी में गहरी जुताई करे व फसल चक्र अपनावें।
5. कार्बेण्डाजिम या मेन्कोजेब 2 ग्राम प्रति किलो बीज या ट्राइकोडर्मा 4 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से बीजोपचार करें।
6. फसल में पुष्पन शुरू होने के बाद खासतौर से नमी बढ़ जावें एवं आकाश मे बादल दिखाई दे तब फसल पर डाइथेन एम 45 (मेन्कोजेब) का दो किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें या टाप्सीन एम (थायोफिनेट मिथाईल 0.1 प्रतिशत) का घोल बनाकर छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार 12 से 15 दिन पर दोबारा छिड़काव करें।

छाछ्या/चूर्णी फफूंद (पाउडरीमिल्ड्यू) :-यह रोग ''ईरीसाइफी पोलीगोनी'' नामक कवक से होता है। इस रोग के लक्षण पत्तियों पर सफेद चूर्ण के रूप में दिखाई देते है। धीरे–धीरे पौधे के तने एवं बीज पर रोग फैल जाता हैं एवं पूरा पौधा दूर से ही सफेद दिखाई देता है। रोग बढ़ने पर पोधा गन्दला व कमजोर हो जाता है।

नियन्त्रण :-

1. जीरे की बुवाई 15 नवम्बर के आसपास कर देवें। ज्यादा देरी से बोने से रोग का प्रकोप अधिक होता है।
2. रोग के लक्षण दिखाई देते ही गन्धक चूर्ण 20–25 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से भुरकाव करे या घुलनशील गंधक ढाई किलों प्रति हैक्टेयर या केराथेन एल सी 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी की की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार छिड़काव या भुरकाव 10 से 15 दिन बाद दोहरावें।

जीरे की फसल में लगने वाले कीट व रोगों के नियन्त्रण के लिए कवकनाशी व कीटनाशी छिड़काव के लिए निम्न पौध संरक्षण उपाय अपनावें।

प्रथम छिड़काव :-बुवाई के 30–35 दिन बाद फसल पर मेन्कोजेब 2 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर का पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें

द्वितीय छिड़काव :- बुवाई के 45–50 दिन बाद फसल पर मेन्कोजेब के साथ घुलनशील गंधक 0.2 प्रतिशत या केराथेन एक मिली लीटर व डाइमिथोएट 30 ई.सी. एक मि.ली. प्रति लीटर पानी के हिसाब से घोल बनाकर छिड़काव करें।

तृतीय छिड़काव :-दूसरे छिड़काव से 10 से 15 दिन बाद उपरोक्त अनुसार ही छिड़काव करें।

सौंफ

प्रमुख कीट, रोग एवं रोकथाम :-

मोयला, पर्णजीवी (थ्रिप्स) एवं मकड़ी :- मोयला पौधे के कोमल भाग से रस चूसता है तथा फसल को काफी नुकसान पहुंचाता है। थ्रिप्स कीट बहुत छोटे आकार का होता हैं तथा कोमल एवं नई पत्तियों से हरा पदार्थ खुरचकर खाता है जिससे पत्तियों पर धब्बे दिखाई देने लगते हैं तथा पत्ते पीले होकर सूख जाते है। मकड़ी छोटे आकार का कीट है जो पत्तियों पर घूमता रहता है रस चूसता है जिससे पोधा पीला पड़ जाता है।

इन कीटों के नियन्त्रण हेतु डाईमिथोएट 30 ई.सी. 500 मि.ली. या मैलाथियान 50 ई.सी. 500 मि.ली. प्रति हैक्टेयर के हिसाब से छिड़काना चाहिए। आवश्यकतानुसार छिड़काव 15 से 20 दिन बाद दोहरायें।

छाछ्या (पाउडरी मिल्ड्यू) :-यह रोग ईरीसाईफी पोलीगोनी नाम कफफूंद द्वारा होता हैं रोग का प्रकोप फरवरी से मार्च के महीनों में अधिक रहता हैं इस रोग के लगने पर शुरू में पत्तियों एवं टहनियों पर सफेद चूर्ण दिखाई देता है। जो बाद में सम्पूर्ण पौधे पर फैल जाता है।

छाछ्या के नियन्त्रण हेतु 20 से 25 किलोग्राम गंधक के चूर्ण का भुरकाव प्रति हैक्टेयर करना चाहिए या कैराथियान एल सी. 1 मिली लीटर प्रति लीटर पानी के घोल बनाकर छिड़कना दोहरावें।

झुलसा (रूमुलेरिया ब्लाईट) :-यह रोग रूमुलेरिया फोइनेकुलाई नामक फफूंद द्वारा होता हैं। यह रोग बुवाई के 60–70 दिन बाद पुरानी पत्तियों की निचली सतहों पर गहरे भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते है। रोग की शुरू की अवस्था मे राख के समान छोटे धब्बे पत्तियों की निचली सतहों पर दिखाई देते हैं जो उग्र अवस्था मे बड़े हो जाते है। और बाद मे सफेद उठी हुई वृद्विके रूप में दिखाई देते है। धीरे–धीरे रोग तने व फलों पर भी फैल जाता है।

इस रोग के नियन्त्रण हेतु बाविस्टीन 0.1 प्रतिशत या मेन्कोजेब 0.2 प्रतिशत या ताम्रयुक्त कवकनाशी 0.3 प्रतिशत का घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार 10–15 दिन के अन्तराल पर दोहरावें।

झुलसा (आल्टरनेरिया ब्लाईट) :- यह रोग आल्टरनेरिया टेनुईस नामक फफूंद द्वारा होता है। आल्टरनेरिया द्वारा आक्रमण मुख्यतः पुष्पक्रम पर होता है। पत्तियों के सिरे तथा पुष्पक्रम झुके हुए तथा झुलसे दिखाई देते है।

इस रोग के नियन्त्रण हेतु मेन्कोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी के हिसाब से फसल पर छिड़काव करें।

जड़ व तना गलन (रूट व स्टेम रोट) :-यह रोग स्केलेरोटीनिया स्कलेरोशियम नामक फफूंद द्वारा होता है। इस रोग के प्रकोप से तना नीचे से मुलायम हो जाता हैं व जड़ गल जाती है। जडों पर छोटे बड़े काले रंग के स्कलेरोशिया दिखाई देते है।

इस रोग के नियन्त्रण हेतु बुवाई से पूर्व बीज को बॉवस्टीन 2 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित कर बुवाई करनी चाहिए।

गोंदिया (गमोसिस) :- यह एक पादप कार्यिकी विकार है। इस विकार में पौधे के फूलों द्वारा चीनी की चाश्नी जैसा द्रव छोडा जाता है जो बाहर से फफूंदी एवं चैपा (मोल्ड) को आकर्षित करता हैं जिसकी वजह से पौधा काला एवं गूंदिया नजर आता है।

रोग ग्रस्त खेतों में सिंचाई एवं खाद देना बंद कर देना चाहिए। डाइमिथोएट 0.03 प्रतिशत या फॉस्फोमिडान 0.05 प्रतिशत का छिड़काव करें।

मेथी

प्रमुख कीट, रोग एवं रोकथाम :-

चूर्णिल आसिता :-इसे छाछ्या रोग भी कहते हैं प्रारम्भ में पत्तियों पर सफेद चूर्णिल पुंज दिखाई देते हैं और उग्र रूप में पूरे पौधे को चूर्णिल आवरण से ढ़क देते है। इससे बीज की उपज एवं गुणवता में कमी आ जाती हैं।

रासायनिक नियंत्रण–पर्णीय छिड़काव

1. 0.1 प्रतिशत कैराथेन एल.सी.
2. 0.2 प्रतिशत निलम्बनशील गंधक 500 लीटर घोल प्रति हैक्टेयर
3. 0.1 प्रतिशत बावस्टिन का छिड़काव करें।

मृदुरोमिल आसिता :-रोग के प्रारम्भ मे पत्ती की निचली सतह पर सफेद मृदुरोमिल वृद्विदिखायी देती है। रोग के बढ़ने पर पत्तिया पीली होकर गिरने लगती हैं और पौधों की वृद्धि रूक जाती है।

रासायनिक नियंत्रण :– पर्णीय छिड़काव

1. ब्लाइटॉक्स 50 का 0.3 प्रतिशत का 400–500 लीटर घोल प्रति हैक्टेयर
2. डायथेन जेड–78 / डायथेन एम 45 का 0.3 प्रतिशत घोल का 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

मूल गलन :-यह मेथी एवं कसूरी मेथी की गंभीर बीमारी हैं जिसमें जड़ों का पास सड़न तथा बुआई के 30–35 दिनों के बाद पौधे पीले होकर सूख जाते है।

नियंत्रण :

1. नीम की खली 1 टन प्रति हैक्टेयर बुआई से पूर्व मे मिलाए।
2. बीज उपचार कार्बेन्डाजीम 2 ग्राम दवा प्रति 1 किग्रा. बीज से करना चाहिए।

कीटों की रोकथाम एवं नयंत्रण :-

माहू :- इसके नियंत्रण के लिए 0.03 प्रतिशत डाइमेथोएट 30 ई.सी. या फॉस्फेमिडान 40 ई.सी. में से कोई एक दवा का 400–500 लीटर घोल प्रति

हैक्टेयर प्रभावी होता है।

दीमक :-इसकी रोकथाम के लिए 4 लीटर प्रति हैक्टेयर क्लोरीपायरीफॉस सिंचाई के साथ पानी में देते है।

छाछ्या रोग एवं एफिड (मोयला) का कार्बनिक प्रबन्धन

मेथी में छाछ्या रोग एवं एफिड (मोयला) के कार्बनिक प्रबन्धन के लिए 2 टन प्रति हेक्टर की दर से नीम की खल एवं 2.5 किग्रा प्रति हेक्टर की दर सेट्राइकोडर्मा विरिडी भूमि में मिलावें एवं 5 प्रतिशत नीम बीज अर्क का छिडकाव 10 दिन के अंतराल पर (दो / तीन बार) करना प्रभावी पाया गया है।

ग्रीष्मकालीन मूंग उत्पादन की वैज्ञानिक तकनीकी

डॉ. रणवीर कुमार यादव, सहायक आचार्य,
डॉ. सन्तोष देवी सामोता, सहायक आचार्य,
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर
एवं डॉ. एस.एल. यादव, सहायक आचार्य,
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

मूंग ग्रीष्म एवं खरीफ दोनों मौसम की कम समय में पकने वाली एक मुख्य दलहनी फसल है। इसका का प्रयोग मुख्य रूप से दाल के लिए किया जाता है। जिसमें 24–26 प्रतिशत प्रोटीन, 55–60 प्रतिशत कार्बोहायड्रेट एवं 1–3 प्रतिशत वसा होती है। यह भारत की मुख्य दालों में से एक है। यह प्रोटीन के साथ–साथ रेशे और लौहे का मुख्य स्त्रोत है। दलहनी फसल होने के कारण इसकी जड़ो में गांठे पायी जाती है जो वायु–मंडल नाइट्रोजन को मृदा में स्थिरीकरण एवं फसल की खेत से कटाई उपरांत जड़ो एवं पत्तियों के रूप में प्रति हैक्टेयर 1–5 टन जैविक पदार्थ भूमि में छोड़ जाता है जिससे भूमि में जैविक कार्बन का अनुरक्षण होता है एवं मृदा की उर्वराशक्ति बढ़ती है।

मृदा : मूंग की खेती सभी प्रकार की मिट्टी में सफलतापूर्वक की जाती है, लेकिन मध्यम दोमट, मटियार भूमि समुचित जल निकास वाली, जिसका पीएच मान 7–8 हो इसके लिए उत्तम होती है।

खेत की तैयारी: खेत की पहली जुताई हैरो या मिट्टी पलटने वाले हल से करनी चाहिए। इसके बाद दो–तीन जुताई कल्टीवेटर से करके खेत को अच्छी तरह भुरभरा बना लेना चहिए। आखिरी जुताई में लेवलर लगाना अति जरूरी है, इससे खेत में नमी लम्बे समय तक संरक्षित रहती है। दीमक से ग्रसित भूमि को फसल की सुरक्षा के लिए क्यूनालफास 1.5 प्रतिशत चूर्ण 25 किलोग्राम प्रति एकड़ के हिसाब से अंतिम जुताई से पहले खेत में बिखेर दें और उसके बाद जुताई कर उसे मिट्टी में मिला दें।

उन्नत किस्में :

एस एम एल 668 : मूंग यह किस्म जल्दी तैयार होने वाली किस्मों में से एक हैं। इसकी फलियां नीचे की ओर गुच्छे के रूप में झुकी होती हैं। इस किस्म के दाने मोटे होते हैं। इस किस्म से प्रति हैक्टेयर 15 से 20 क्विंटल तक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

मोहिनी : मूंग की मोहनी किस्म 70–75 दिन में पक कर तैयार हो जाती है। इसकी हर फली में 10–12 बीज और दाने छोटे होते हैं। मूंग इस किस्म में पीला मोजैक वायरस को सहन करने की क्षमता होती है। इस किस्म से प्रति हैक्टेयर 10–12 क्विंटल तक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

शीला: मूंग की यह किस्म 75–80 दिन में पक कर तैयार हो जाती है। इसका पौधा भी एकदम सीधा बढ़ता है, जो लंबा होता है। इससे प्रति हैक्टेयर 15–20 क्विंटल पैदावार मिल सकती है। यह किस्म उत्तर भारत के मौसम के लिए बहुत उपयुक्त मानी जाती है।

एम.यू.एम 2 : मूंग की इस किस्म का पौधा करीब 85 सेंटीमीटर ऊंचा होता है। इस किस्म के दाने का आकार में मध्यम और चमकदार लगते हैं। मूंग की ये किस्म 80 से 85 दिन में पक जाती है। इससे प्राप्त उपज की बात करें तो इस किस्म से प्रति हैक्टेयर 20–22 क्विंटल पैदावार प्राप्त कर सकते हैं।

आर.एम.जी 268 : मूंग की आरएमजी 268 किस्म उन स्थानों के लिए अच्छी मानी जाती है जहां कम बारिश या सामान्य बारिश होती है। यह किस्म सूखे के लिए प्रतिरोधी होती है। इस किस्म में 28 प्रतिशत तक ज्यादा पैदावार मिल सकती है।

पूसा विशाल: यह किस्म 70–75 दिन में पक कर तैयार हो जाती है। इसको जायद और खरीफ, दोनों मौसम में उगाया जा सकता है। इससे प्रति हैक्टेयर 15–20 क्विंटल तक उत्पादन मिल सकती है।

पंत मूंग 1 : जायद के मौसम में फसल को 65 दिन में पक सकती है। इसके दाने छोटे होते हैं। इससे प्रति हैक्टेयर 10–12 क्विंटल पैदावार प्राप्त की जा सकती है।

मूंग कल्याणी : इसकी फली लंबी गुच्छों में होती है और इसका दाना मोटा और गहरे हरे रंग का चमकदार होता है। मूंग की इस किस्म से प्रति एकड़ उत्पादन 6–7 क्विंटल पैदावार प्राप्त की जा सकती है। ये किस्म पीला मोजेक, चूर्णित आसिता रोग के प्रति सहनशील है।

टी.जे.एम. 3 : यह किस्म ग्रीष्म और खरीफ दोनों के लिए उपयुक्त मानी गई है। मूंग की इस किस्स को पकने में 60 से 70 दिन का समय लगता है। बात करें इसकी पैदावार की तो इस किस्म से 10–12 क्विंटल प्रति हैक्टेयर उपज प्राप्त की जा सकती है। ये किस्म पीला मोजेक एवं पाउडरी मिल्डयू रोग के प्रति प्रतिरोधी है।

पी.एस 16 : यह किस्म लगाने से फसल 60–65 दिन में पककर तैयार हो जाती है। इसका पौधा सीधा और लंबा बढ़ता है। इसके पैदावार की क्षमता प्रति हैक्टेयर 10–15 क्विंटल तक होती है। मूंग की यह किस्म बारिश और ग्रीष्म, दोनों मौसम में उपयुक्त मानी गई है।

फसल बुवाई का समय : जायद में मार्च के प्रथम सप्ताह से अप्रैल के द्वितीय सप्ताह तक बुवाई करनी चाहिए। बुवाई में देरी होने पर गर्म हवा और बारिश से फल्लियों को नुकसान हो सकता है। कतार से कतार के बीच दूरी 45 से.मी. तथा पौधों से पौधों की दूरी 10 सेमी उचित है। बीज को 4 से.मी. की गहराई पर बोना चाहिए।

बीज दर एवं बीज का उपचार : जायद मूंग की फसल के लिए 25 से 30 किलोग्राम बीज प्रति हेक्टेयर के हिसाब से पर्याप्त रहता है। मूंग के बीजों को बीज जनित बीमारियों (जैसे–उखटा, झुलसा आदि) से बचाने के लिए 3 ग्राम पारद फफूंदनाशी या कैप्टान या 2 ग्राम थाईरम या बाविस्टीन (कार्बेन्डाजिम) या 5 ग्राम इमिडाक्लोप्रिड प्रति किलो बीज के हिसाब से उपचारित कर बुवाई करें। 600 ग्राम राइजोबियम कल्चर को एक लीटर पानी में 250 ग्राम गुड़ के साथ गर्म कर ठंडा होने पर बीज को उपचारित कर छाया में सुखा लेना चाहिए और बुवाई कर देनी चाहिए। ऐसा करने से नत्रजन स्थरीकरण अच्छा होता है।

खाद और उर्वरक : खाद एवं उर्वरकों के प्रयोग से पहले मिटटी की जाँच करवा लेनी चाहिये फिर भी कम से कम 5 से 10 टन गोबर की खाद या कम्पोस्ट खाद देनी। बुवाई पूर्व 250 किलो जिप्सम व बुवाई के समय 25 किलो जिंक सल्फेट को ऊरकर खेत में डालें। सल्फर एवं जिंक के प्रयोग से दाने सुडौल एवं चमकदार बनते हैं। मूंग के लिए 10–15 किलो ग्राम नाइट्रोजन तथा 30–40 किलो ग्राम प्रति हैक्टेयर की आवश्कता होती है।

सिंचाई : मूंग की फसल में फूल आने से पूर्व (30–35 दिन पर) तथा फलियों में दाना बनते समय (40–50 दिन पर) सिंचाई अत्यन्त आवश्यक है। तापमान एवं भूमि में नमी के अनुसार आवश्यकता होने पर अतिरिक्त सिंचाई करें ।

खरपतवार नियंत्रण : प्रथम निराई बुवाई के 20–25 दिन के भीतर व दूसरी 40–45 दिन में करना चाहिये।

फसल की बुवाई के एक या दो दिन बाद तक पेन्डीमेथलीनकी बाजार में उपलब्ध 3.30 लीटर मात्रा या इमेंजीथाइपर की 400 मिली. मात्रा प्रति हेक्टयर

की दर से 600 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव कर देना चाहिए।

रोग और कीट नियंत्रण

दीमक : बुवाई से पहले अंतिम जुताई के समय खेत में क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत की 20–25 किलो ग्राम मात्रा प्रति हैक्टेयर की दर से मिट्टी में मिला देनी चाहिए।

कातरा : इस कीट की लट पौधों को आरम्भिक अवस्था में काटकर बहुत नुकसान पहुंचती है । कातरे की लटों पर क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत पाउडर की 20–25 किलो ग्राम मात्रा प्रति हैक्टेयर की दर से भुरकाव कर देना चाहिये।

मोयला, सफेद मक्खी और हरा तेला : इनकी रोकथाम के किये मोनोक्रोटोफॉस 36 डब्ल्यू ए.सी या मिथाइल डिमेटान 25 ई.सी. 1.25 लीटर या एमिडाक्लोप्रिड 200 एस एल का 500 मिली. मात्रा प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए ।

फली छेदक : फली छेदक को नियंत्रित करने के लिए मोनोक्रोटोफास 1000 मिली. लीटर या मैलाथियोन या क्युनालफांस 1.5 प्रतिशत पॉउडर की 20–25 किलो हैक्टेयर की दर से छिड़काव भुरकाव करनी चहिये।

चीती जीवाणु रोग : इस रोग की रोकथाम के लिए एग्रीमाइसीन 200 ग्राम या स्टेप्टोसाईक्लीन 50 ग्राम को 500 लीटर में घोल बनाकर प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए ।

पीत शिरा मोजैक : यह रोग एक मक्खी के कारण फैलता है। इसके नियंत्रण के लिए डायमिथोएट 30 ई सी 1 लीटर प्रति हैक्टेयर की दर से 10 दिनों के अंतराल पर घोल बनाकर छिड़काव करना काफी प्रभावी होता है।

तना झुलसा रोग : इस रोग की रोकथाम हेतु 2 ग्राम मैकोंजेब से प्रति किलो बीज दर से उपचारित करके बुवाई करनी चहिए। बुवाई के 30–35 दिन बाद 2 किलो मैकोंजेब प्रति हैक्टेयर की दर से 500 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चहिये ।

छाछ्या रोग : इस रोग की रोकथाम हेतु प्रति हैक्टेयर ढाई किलो घुलनशील गंधक अथवा एक लीटर कैराथियॉन (1 प्रतिशत) के घोल का पहला छिड़काव रोग के लक्षण दिखाई देते ही एवं दूसरा छिड़काव 10 दिन के अन्तर पर करें।

फसल कटाई : मूंग की फलियों जब काली पड़ने लगे तथा सुख जाये तो फसल की कटाई कर लेनी चाहिए। फलियों को ज्यादा पकने नहीं देना चाहिए इससे वे झड़ जाती हैं जिससे पैदावार का नुकसान होता है। थ्रैशिंग के बाद बीजों का साफ कर धूप में सूखाएं।

उत्पादन : वैज्ञानिक विधि से जायद में उन्नत कृषि तकनीक अपनाकर 10–15 क्विंटल प्रति हैक्टेयर मूंग की उपज प्राप्त की जा सकती है।

भण्डारण : बीज के भण्डारण से पहले अच्छी तरह सुखा लेना चाहिए. बीज में 8 से 10 प्रतिशत से अधिक नमी नहीं रहनी चाहिए। मूंग के भण्डारण में स्टोरेज बिन का प्रयोग करना चाहिए।

डॉ. एस. आर. ढाका
प्रसार शिक्षा निदेशक

निदेशक की कलम से

मार्च माह में कृषि कार्य

प्रिय किसान भाईयों,

1. गेहूँ की फसल में गांठ बनते समय तथा बालियाँ आने के समय (बुवाई के 70 दिन बाद) व जौ में दूधिया अवस्था पर सिंचाई करें।
2. गेहूँ व जौ की खड़ी फसल में दीमक नियंत्रण हेतु इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 400 मि.ली. या फिप्रोनिल 5 एस.सी. 1 लीटर प्रति हैक्टेयर सिंचाई के साथ देवें
3. लहसुन एवं प्याज की फसल में पर्णजीवी (थ्रीप्स) के नियंत्रण हेतु थाईमेथाक्सॉम 25 प्रतिशत ई.सी. का 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करें। बैंगन में चकता रोग व तुलासिता रोग के नियंत्रण के लिए फसल पर मेंकोजेब 75 प्रतिशत डब्ल्यू.पी. 2 ग्राम प्रति लीटर पानी के हिसाब से घोल बनाकर छिड़काव करें।
4. जायद मूंग की बुवाई के लिये आई.पी.एम. 02–03, पूसा बैशाखी व आर.एम.जी.–492 किस्में बोयें।
5. जीरा, मटर, सौंफ, मेथी एवं धनियां की फसल में छाछ्या रोग का प्रकोप दिखाई देने पर 25 किलो गंधक के चूर्ण का प्रति हैक्टेयर की दर से भुरकाव करें या डाइनोकेप का 1.0 मिली. प्रति लीटर या हेक्जाकोनाजोल 10 प्रतिशत ई.सी. 0.5 मिली प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।
6. ग्रीष्मकालीन मिर्च एवं टमाटर की नर्सरी तैयार करें। बुवाई पूर्व बीजों को केप्टान 2 ग्राम प्रति किलो बीज के हिसाब से उपचारित करें एवं नर्सरी में 8 से 10 ग्राम कार्बोफ्यूरोन 3 ग्राम प्रति वर्ग मीटर के हिसाब से मिलावें।
7. प्याज की रोपाई के 30–45 दिन बाद फसल में 50 किलोग्राम नत्रजन प्रति हैक्टेयर देवें एवं सिंचाई करें।
8. नींबू में केन्कर रोग की रोकथाम के लिये बोर्डो मिश्रण (4:4:50) या स्ट्रेप्टासाइक्लीन 300–400 मिली दवा प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। पपीते में तना गलन की रोकथाम हेतु उचित जल निकास की व्यवस्था करें। केप्टान या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 2 ग्राम दवा प्रति लीटर पानी में मिलाकर जड़ों में डालें।
9. नवजात बछड़े–बछड़ियों को अन्तः परजीवीनाशक दवाई, पशु चिकित्सक की सलाहनुसार दें। दुधारू पशुओं को थनैला रोग से बचाने के लिये दूध पूरा व मुठ्ठी बांध (फुल मिल्कींग) कर निकालें। पशुशाला की प्रतिदिन सफाई करें।

प्रमुख संरक्षक : डॉ. बलराज सिंह
संरक्षक : डॉ. एस. आर. ढाका
प्रधान सम्पादक : डॉ. सन्तोष देवी सामोता
डॉ. बी. एल. आसीवाल
डॉ. बसन्त कुमार भींचर
डॉ. शीला खड़र्कवाल
तकनीकी परामर्श : डॉ. एम.आर. चौधरी
डॉ. आर. पी. घासोलिया
डॉ. डी. के. जाजोरिया
डॉ. रोशन चौधरी

बुक पोस्ट

डाक टिकट

पत्रिका सम्बन्धी आप अपने सुझाव, आलेख एवं अन्य कृषि सम्बन्धी नवीनतम जानकारियाँ हमारे मेल jobnerkrishi@sknau.ac.in पर भेजे।

प्रकाशक एवं मुद्रक : निदेशालय, प्रसार शिक्षा, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर के लिए अम्बा प्रिन्टर्स, जोबनेर से मुद्रित।